प्राकृतिक आपदाओं में आदमी

प्रमोद भार्गव

विकास की अवधारणा औद्योगिक टेक्नॉलॉजी के विस्तार के बहाने ऐसे हितों की नीतिगत पोषक बन गई जिसमें प्रकृति का व्यावसायिक दोहन निहित है। फलस्वरूप प्राकृतिक असंतुलन गड़बड़ाया, वैश्विक तापमान बढ़ा। इसने पूरी दुनिया की मानव आबादी को प्राकृतिक आपदाओं के संकट में डाल दिया। यही कारण है कि बिहार में कोसी का पानी प्रलय बन गया। अमरीका में गुस्ताव तूफान कहर बरपा रहा है और चीन में भूकंप से लोग खौफज़दा हैं। प्रकृति का यह रौद्र रूप मानव आबादी को निगल लेने पर आमादा है। आर्थिक असुरक्षा के गंभीर हालात और मौत की अंधी सुरंगों में धकेल देने वाले इस कथित विकास पर लगाम लगाने का समय आ गया है।

देश की आज़ादी के तत्काल बाद सिंचाई, विद्युत, पेयजल और बड़े उद्योगों को जलापूर्ति के लिए जो विशाल जलाशय हज़ारों एकड़ वन और बस्तियों को उजाड़कर बनाए गए थे, वे अब या तो जलाभाव में दम तोड़ रहे हैं या कोसी का कहर बन मानव और बस्तियों को लील रहे हैं। अकेले भारत में बड़े बांधों के निर्माण के लिए चार करोड़ के करीब लोग विस्थापित किए जा चुके हैं। इनका समुचित विस्थापन कभी नहीं हो पाया।

कोसी के तटबंधों का निर्माण 1959 से 1963 के बीच बाढ़ नियंत्रण के लिए ही भारत और नेपाल के बीच द्विपक्षीय समझौते के तहत किया गया था। नदी के बहाव को पश्चिम की ओर जाने से रोकने की दृष्टि से 246 किलोमीटर लंबे किनारे भी बनाए गए थे लेकिन कोसी के इस प्राकृतिक बहाव को रोकने की कवायद ही बिहार में आपदा का कारण बनी। जलावेग के समक्ष मानव निर्मित तटबंध टिक नहीं पाया। इसलिए अब सोचने की ज़रूरत है कि नदियों पर बनाए जाने वाले बांधों की नीतियां क्या कारगर हैं? अथवा इन्हें बदलकर छोटी-छोटी जल संरचनाओं को अपनाने की ज़रूरत है?

वैसे बाढ़ भारत में कोई नई समस्या नहीं है। बिहार, असम और उत्तर प्रदेश में गंगा, यमुना और ब्रह्मपुत्र हर साल बाढ़ में तब्दील होकर लाखों लोगों का जीवन तबाह करती हैं। लेकिन प्रभावित क्षेत्रों की मानव बस्तियां हर वर्ष बाढ़ की इन घटनाओं का सामना करती हैं। इसलिए उन्होंने बाढ़ों से जानमाल को बचाने के उपाय भी ढूंढ निकाले हैं, जिनके बूते उनकी दिनचर्या बिना किसी अतिरिक्त मदद के फिर सामान्य हो जाती है।

बांग्लादेश के बाद भारत दूसरा ऐसा देश है जहां बाढ़ से सबसे ज़्यादा लोग प्रभावित होते है और मारे भी जाते हैं। लेकिन कोसी की यह आपदा और दो साल पहले महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक और आंध्रप्रदेश के बड़े शहरों में आई बाढ़ें शहरीकरण के बढ़ते दबाव और पेयजल व बिजली की उपलब्धता बढ़ाने के लिए बनाए गए विशाल बांधों के कारण आई हैं। इन बांधों में जब जल भंडारण की क्षमता पूरी हो गई और अतिवृष्टि के कारण पानी का दबाव लगातार बढ़ता रहा तो एकाएक बांधों के सभी द्वार खोल दिए गए। शहरों में आजकल वैसे भी जल निकासी के ज़्यादातर मार्ग कूड़े कचरे के कारण अवरुद्ध रहते हैं। नतीजतन मुंबई, सूरत, वडोदरा और अहमदाबाद आदि शहरों को बाढ़ का संकट झेलना पड़ा। करोड़ों की संपत्ति नष्ट हुई और सैकड़ों जानें गईं। ये त्रासदियां मानव निर्मित त्रासदियां कही जा सकती हैं।

कोसी का कहर जब भारत की एक करोड़ से भी ज़्यादा आबादी पर टूट रहा था, ठीक उसी समय मेक्सिको की खाड़ी से अमरीका के तटवर्ती क्षेत्रों से गुज़रने वाले तूफान गुस्ताव के चलते लुइसियाना और न्यू ओरलिएंस के बीस लाख से ज़्यादा लोगों को पलायन करना पड़ा। जमैका में तो 80 लोग मारे भी गए। इससे पूर्व अमरीका में कैटरीना तूफान भी तबाही मचा चुका है।

आगे चलकर क्यूबा भी समुद्री तूफान की चपेट में आ गया। जब भारत बाढ़ और अमरीका समुद्री तूफान से जूझ रहे थे तभी चीन के सिचुआन और हुन्नान शहर भूकंप से थर्रा रहे थे। यहां करीब एक सैकड़ा लोग मारे गए, डेढ़ लाख घर क्षतिग्रस्त हुए। कुल मिलाकर दस लाख लोग प्रभावित हुए।

दुनिया के एक छोर से दूसरे छोर तक फैली ये प्राकृतिक आपदाएं अनायास नहीं है। इनकी पृष्ठभूमि में औद्योगीकरण की प्रमुखता है। जिसकी वजह से कार्बन डाईऑक्साईड के उत्सर्जन की मात्रा में लगातार वृद्धि हो रही है, जो तापमान में वृद्धि का करण बनी हुई है। ऊर्जा उत्पादन के कारण दुनिया में कार्बन डाईऑक्साइड का उत्सर्जन वर्ष में 11.4 अरब टन होने का अनुमान है। सन 2000 में यह मात्रा 8.5 अरब टन से भी कम थी। इसमें चीन के ऊर्जा संयंत्र 3.1 अरब टन, अमरीका के 2.8 तथा भारत के 63.8 करोड टन कार्बन डाईऑक्साइड का उत्सर्जन करते हैं। यह ऊर्जा वैश्विक तापमान को प्रभावित कर रही है। नतीजतन हिमालय के प्रमुख हिमनद इक्कीस फीसदी से भी ज़्यादा संकुचित होकर समुद्र में समा गए हैं। इस कारण समुद्र का बढ़ता जल स्तर तटवर्ती आबादियों के लिए खतरा बनता जा रहा है। यदि इस बढ़ते जल स्तर को नियंत्रित करने के उपाय नहीं तलाशे गए तो करोड़ों लोग अपने रहवासों से पलायन करेंगे। तब अकाल और महामारी का संकट भी सुरसा की तरह मुंह फैलाएगा।

जो ऑस्ट्रेलिया एक समय गेहूं का बड़ा उत्पादक और निर्यातक था, वहीं पड़े अकाल के पीछे जलवायु परिवर्तन की अहम भूमिका है। चीन, भारत और अन्य विकासशील देशों में औद्योगिक विकास ने जलवायु परिवर्तन की उस गति को बढ़ा दिया है, जो पहले ही विकसित देशों की उपभोगवादी जीवन शैली की वजह से संकट बन रही थी।

इस संदर्भ में मांसाहार पर भी ध्यान देना ज़रूरी है। यदि खान-पान की इस शैली की वैज्ञानिक पड़ताल करें तो सौ कैलोरी के बराबर गौ मांस (बीफ) तैयार करने के लिए सात सौ कैलोरी के बराबर अनाज खर्च करना पड़ता है। इसी प्रकार बकरे और मुर्गियों के पालन में जितना अनाज खर्च होता है, उतना अगर सीधे खाया जाए तो वह कहीं ज़्यादा लोगों की भूख मिटा सकता है। ऐसी ही विसंगतियों के चलते भूख और उससे उपजी बीमारियों के कारण प्रतिदिन चौबीस हज़ार लोग अकाल मौत मारे जाते हैं। दुनिया में पन्द्रह करोड़ से ज़्यादा बच्चे कुपोषण का शिकार रहते हुए तिल-तिलकर मर रहे हैं।

प्राकृतिक आपदाओं से उबरना है, प्रकृति का संतुलन बरकरार रखना है तो भूमण्डलीकरण की आधुनिक अवधारणा से मुक्त होकर वसुधैव कुटुम्बकम् की अवधारणा को स्थापित करने की मुहिम चलानी होगी, जो वैश्विक सामुदायिक हितों का ख्याल रखते हुए प्राकृतिक संपदा के सीमित उपभोग के मूल्य को स्थापित करे। प्रकृति और जीव जगत के सहअस्तित्व पर ही हमारा अस्तित्व टिका है। ***(स्रोत फीचर्स)***

वर्ग पहेली 62 का हल

वॉ	ट	स	न	क्रि	क		दा	
	क		म		र	वि	वा	र
	सा		क	द			न	
	ल	य			कु	चा	ल	क
कू			भो	पा	ल			ल
प	त	वा	र			नी	र	
	ट			खो	ज		क्त	
आ	व	र्ध	न		ल		स्रा	
	र्ती		ख	नि	ज	ल	व	ण